International Advance Journal of Engineering, Science and Management (IAJESM)
Multidisciplinary, Indexed, Double Blind, Open Access, Peer-Reviewed, Refereed-International Journal.
SJIF Impact Factor =7.938, January-June 2024, Submitted in June 2024, ISSN -2393-8048

स्त्री विमर्श और हिन्दी उपन्यास

डॉ. सीमा सुरोलिया, व्याख्याता, हिन्दी विभाग, जगदम्बा पी.जी. कॉलेज, खाजूवाला (बीकानेर)

शोध संक्षेप

इस सदी के साहित्य का केंद्रीय विषय स्त्री विमर्श और दलित साहित्य है। यद्यपि हमारी परम्परा में सभी प्रकार का आदर्श स्त्री के खाते में जमा दिखाई देता है, परन्तु जब इसे कसौटी पर कसते हैं. तो वह भरभराकर गिर जाता है। आये दिन सभी प्रकार का अन्याय उसके साथ घटित होता हुआ दिखाई देता है। यह विरोधाभासी स्थिति है। मृणाल पांडेय स्त्री विमर्ष में हस्तक्षेप करते हुए लिखती हैं, ''समाज में स्त्रीत्व की मूल अवधारणा नकारात्मक है। लगभग सभी धार्मिक और दार्शनिक दायरे में स्त्री को पुरूष के संदर्भ में एक अपूर्ण और सापेक्ष्य जीवन के रूप में देखा गया है। वास्तविकता यह है कि नारी को उसके अपेक्षित सम्मान के साथ नहीं देखा गया है। इन्हीं स्थितियों का चित्रण हिंदी उपन्यासों में किया गया है। प्रस्तुत शोध पत्र में स्त्री विमर्ष और हिंदी उपन्यास पर विचार किया गया है।

भूमिका

पिछले दशक में स्त्री विमर्श साहित्य और समाज के चिंतन में वेगवती धारा के रूप में उभरा। वस्तुतः पितृसत्तात्मक समाज की संरचना का अन्तर्विरोध एवं नारी के प्रति सामंती विचार ही नारी के शोषण का आधार बना। स्त्री विमर्श कोई निश्चित सैद्धांतिकी निर्मित नहीं कर सकी, लेकिन सारा स्त्रीवाद 'सिस्टरहुड' के विचार से सम्बद्ध होकर सदियों से शोषित नारी की 'मुक्ति' की आकांक्षा रखता है। स्थान एवं परिवेश के अनुसार इसकी प्रकृति में भी भिन्नताएँ विद्यमान हैं। इसे कहीं पर संसार की समस्त स्त्रियों के द्वारा संसार के समस्त पुरूषों के वर्चस्व का विरोध करने वाले विचार के रूप में समझा गया, तो कहीं स्त्री की यौन स्वच्छंदता की वकालत करने वाले विचार के रूप में, तो कहीं हर मामले में स्त्री को पुरूष के समान माने जाने के दावे या अधिकार के रूप में। प्रारम्भ में दलित एवं स्त्री चिंतन में सहयोग का भाव था क्योंकि ऐसा माना गया है कि दोनों की मुक्ति ब्राहमणवाद को ध्वस्त करने में है, जो वर्णव्यवस्था के माध्यम से दलितों का एवं पितृसत्ता के जरिए स स्त्री का शोषण, दमन, अपमान एवं उत्पीड़न को जारी रखे हैं। दलित मुक्ति आंदोलन एवं नारी मुक्ति आंदोलन का यह सहभाव मात्रा विभिन्न अस्मिता संघर्ष की सहानुभूति तक ही सीमित रही क्योंकि, व्यवहार में दलित समाज में भी स्त्री की स्थिति हाषिए पर ही है और लगभग आर्थिक रूप से सवर्णो से अधिक समर्थ से स्त्रियाँ भी पितृसत्तात्मक समाज के वर्चस्ववादी विचारधारा के शोषण का षिकार बनी। विचित्र बात है कि हिन्दी का दलित लेखन जिस ब्राहमणवाद का विरोध करता रहा है, स्त्रियों की यौन शुचिता पर आधारित विवाह तथा परिवार की व्यवस्था की वकालत करके आज वह उसी ब्राहमणवाद का पोषण कर रहा है। .... स्त्रियों के शोषण पर टिकी तथा उनकी सामाजिक परिवर्तनकारी शक्ति से भयभीत रहने वाली वर्तमान व्यवस्था को और क्या चाहिए। वह निर्भय होकर ब्राहमणवाद और पितृसत्तावाद को बनाए रख सकती है।

2. 'जेम्समिल' ने अपनी पुस्तक 'हिस्टरी ऑफ इंडिया' में लिखा है कि कोई समाज कितना सभ्य है इसका पता, उस समाज में स्त्रियों की दशा देखकर चलता है। लेकिन आज जब हम स्त्रियों की दशा देखते हैं तो स्थिति कम भयावह नहीं है। आज स्त्रियाँ अपने श्रम पर, अपने शरीर पर, अपनी कोख पर स्वयं का अधिकार मांगती हैं, रूढिवादी मान्यताओं से मुक्ति की मांग करती हैं। 'पितृसत्ता आदि स्त्रियों को पुरूषों के अधीन रखने के लए तमाम तरह के बन्धनों में जकड़ देने का नाम है, तो स्त्रीवाद उन बन्धनों से मुक्त होने के लिए विद्रोह करने और स्त्री–पुरूष की समानता के लिए प्रयास करने का नाम है।

3. स्त्री प्रश्न केवल 'सेक्स' या 'जेंडर' का प्रश्न नहीं, बल्कि यह भारत जैसे विकासशील देशों की सम्पूर्ण व्यवस्था से जुड़ा प्रश्न है। यह प्रश्न उस 'आधी दुनिया' का है जो जननी के रूप में प्रजनन की क्षमता से युक्त एक शक्ति है तो देश की निर्माणाधीन अर्थव्यवस्था का उत्तम श्रमिक भी। उत्पादन व्यवस्था में श्रम की महत्ता निर्विवाद रूप से स्वयंसिद्ध है, परन्तु दुर्भाग्यवश उसके श्रम पर भी उसका अधिकार नहीं है। पुरूष के समान काम पर भी उसे असमान वेतन दिया जाता है। आज जो नई वैश्विक व्यवस्था कायम हो रही है, उसने नारी मुक्ति के प्रश्न को गौण कर नारी 'एंपावरमेंट' (सबलीकरण) की बात करती है। 'सबलीकरण' वास्तव में एक राजनैतिक छलावा है जो नारी संघर्ष के धारा को कुंद कर नयी वैश्विक व्यवस्था का अंग बनाना चाहती है। भूमण्डलीकरण के साथ–साथ जो धार्मिक मूलवाद, 4. भूमण्डलीकरण एवं साम्प्रदायिक उफान के संबंधों को स्त्री शोषण के संदर्भ में भी देखा जाना चाहिए। इस संदर्भ में 'उर्वषी बुटालिया का वक्तत्व द्रष्टव्य है – कुछ लोग समझते है कि धार्मिक मूलवाद, बहुसंख्यकवाद, साम्प्रदायिकता आदि सामंत जमाने के पुरानी और पिछड़ी हुई चीजें हैं। लेकिन ये अत्यन्त आधुनिक हैं। ये सब आज के भूमण्डलीकरण से जुड़ी हुई है और इनको संचालित करने वाले दिमाग बिल्कुल आज की दुनिया के दिमाग हैं। उसके पास नयी से नयी टेक्नालाजी है, नये से नये हथियार हैं, नयी से नयी

विचारधारा भी है– भले ही वे धर्म, सम्प्रदाय, राष्ट्रवाद या प्राचीन संस्कृति आदि का चोला पहनकर सामने आती हो।

5. स्त्री विमर्श और हिंदी उपन्यास

हिन्दी साहित्य खासकर उपन्यासों में स्त्री विमर्ष का प्रारंभ जैनेन्द्र कुमार के उपन्यासों से हुआ। अपने तीनों बहुचचिर्त उपन्यास 'परख', 'सुनीता', त्यागपत्र' में जैनेन्द्र परिधि से नारी को केन्द्र में लाते हैं। पारंपरिक व्यवस्था को चुनौती देते हुए वे स्त्री को पुरूष के समानान्तर खड़ा करते हैं। 'परख' में कट्टो की वेदना को पाठक महसूस करता है। विधवा पुनर्विवाह उस समय एक बड़ी सामाजिक समस्या थी। कट्टो के माध्यम से जैनेन्द्र सामंती पुरूषसत्तात्मक मान्यताओं पर प्रहार करते हैं। 'सुनीता' में प्रेम को धरातल पर लाकर उसे नारी के संदर्भ में समझने का प्रयास है तो 'त्यागपत्र' पारंपरिक हिन्दू समाज के विवाह, नैतिकता, मर्यादा को तिरस्कृत कर मृणाल के रूप में एक ऐसी नारी हमारे सामने उपस्थित करते हैं, जिसके प्रश्नों का जवाब हमारे पास नहीं है। ज्योतिष जोषी लिखते हैं– स्त्री को स्वतंत्रता सम्मान और व्यक्तित्व देने के प्रसंग में जैनेन्द्र कुमार की देन को उस आधुनिक चेतना से जोड़कर देखा जाता है, जिससे पारंपरिक नजरिये को बदला और स्वाधीनता संघर्ष के दौरान महात्मा गांधी के आहवान में पर्यवसित हुआ। यह तथ्य है कि स्वतंत्राता पूर्व के उपन्यासों में भारतीय किसानों के साथ–साथ स्त्रियों को प्रमुखता मिली तथा उनकी बदहाली को समाज की प्रतिभागिता से जोड़कर देखा गया। पर इस दौर में लिखे गये उपन्यासों में स्त्रियों के लिए तयषुदा सरहदें ही रहीं, उनके लिए बाहर दुनिया जैसे वर्जित हीं थी।

6. प्रेचचंद ने अपने उपन्यासों खासकर 'निर्मला' और 'सेवासदन' के माध्यम से स्त्री के जीवन एवं समाज व्यवस्था में उसकी हैसियत को आंकने की चेष्टा की तथा उसके संघर्षो को स्वर दिया। 'गोदान' की धनिया के तकलीफों का चित्रण, भारतीय मजदूर–किसान का सामंतषाही में पीसते नारी का चित्रण है। जयशंकर प्रसाद के 'कंकाल', 'तीतली' और 'इरावती' शीर्षक उपन्यासों में स्त्री–जीवन के क्रूर यथार्थ का उद्घाटन होता है। यहाँ जयषंकर प्रसाद किसी बाहय आवरण की आवष्यकता महसूस नहीं करते, बल्कि नारी–वेदना के सत्य से हमारा साक्षात्कार कराते है। आजादी के बाद लिखे गये उपन्यासों में नारी विमर्ष की दृष्टि से यषपाल महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। उनका उपन्यास 'मनुष्य के रूप', 'झूठा सच' आदि में स्त्री के बन्धनों, व्यथा का मार्मिक चित्रण हुआ और उनसे मुक्ति की कामना की गई। नागार्जुन ने 'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा' और 'नई पौध' में विधवा विवाह, अनमेल विवाह की त्रासदी भोगती स्त्रियों और किषोरियों की त्रासद जिन्दगियों के करूण चित्र प्रस्तुत किये है। भैरव प्रसाद गुप्त ने भी अपने उपन्यासों 'गंगा मैया', 'सती मैया का चौरा8 आदि में स्त्रियों की समस्या को उठाया और स्त्री विमर्ष को केन्द्र में लाने की पहल की। फणीष्वर नाथ रेणु ने 'मैला आँचल' में अनेक स्त्रियों की मर्मान्तक व्यथा का अंकन किया और समाज के वहषीपने को उजागर किया। अमृत लाल नागर के 'बूंद और समुद्र', 'अमृत और विष', 'नाच्यो बहुत गोपाल', राजेन्द्र यादव के 'सारा आकाष' नरेष मेहता के 'यह पथ बंधू था' और 'उत्तर कथा', शैलेष मटियानी के 'चौथी मुट्ठी', 'मुख सरोवर के हंस', पंकज बिष्ट के 'उस चिड़िया का नाम' आदि उपन्यासों में स्त्री विमर्ष का जो स्वरूप सामने आता है, उसमें एक नई स्त्री जन्म लेती प्रतीत होती है। स्त्री विमर्ष धीरे–धीरे हिन्दी उपन्यासों में इस तरह विन्यस्त हो गया कि इसके बिना उपन्यास की कल्पना बेमानी होती गई। सच तो यह है कि अपने प्रारंभिक दौर से हिन्दी उपन्यास स्त्री अस्मिता के प्रष्नों से जूझता रहा। आगे चलकर ऊषा प्रियंवदा, कृष्णा सोबती, प्रभा खेतान, चित्रा मुदगल आदि स्त्री उपन्यासकारों ने 'भोगे यथार्थ' के बल पर 'स्त्री विमर्ष' को नई पहचान और ऊँचाई प्रदान की।

संदर्भ ग्रन्थ

1. कथन, रमेश उपाध्याय, जुलाई–सितम्बर 2003, पृष्ठ 6
2. कथन, रमेश उपाध्याय, जुलाई–सितम्बर 2003, पृष्ठ 57
3. कथन, उमा चक्रवर्ती, जुलाई–सितम्बर 2003, पृष्ठ 57
4. कथन, उर्वशी बुटालिया, जुलाई–सितम्बर 2003, पृष्ठ 75
5. कथन, उर्वशी बुटालिया, जुलाई–सितम्बर 2003, पृष्ठ 75
6. स्त्री विमर्श और हिन्दी उपन्यास, कृति, 2005